



Research Article

योगासन, जीवनशैली और आहार: समग्र स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सुनिता चौधरी ^{1*}, डॉ. मानेश ²

¹ शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय जयपुर, राजस्थान, भारत
² शोध निर्देशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय जयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author: * सुनिता चौधरी

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.21777521>

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र योगासन, जीवनशैली और आहार के जटिल अंतर्संबंधों और मानव के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर उनके समग्र प्रभाव का गहन तथा विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। आधुनिक युग में जहाँ एक ओर औद्योगिक प्रगति ने भौतिक सुख-सुविधाओं में अभूतपूर्व वृद्धि की है, वहीं दूसरी ओर गतिहीन जीवनशैली और असंतुलित खान-पान ने अनेक प्रकार की जीवनशैली जनित व्याधियों (आयुर्वेद के अनुसार संतर्पणजन्य व्याधियों) को जन्म दिया है। यह शोध प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा—विशेष रूप से आयुर्वेद, हठयोग प्रदीपिका, घेरण्ड संहिता, योगकुण्डलिन्युपनिषत् और भगवद्गीता—में वर्णित 'मिताहार' और 'पथ्य-अपथ्य' के सिद्धांतों की वर्तमान वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता को स्थापित करता है। शोध में यह स्पष्ट किया गया है कि योग मात्र कुछ शारीरिक मुद्राओं (आसनों) तक सीमित नहीं है, अपितु यह एक संपूर्ण जीवन पद्धति है। उचित आहार के अभाव में योग का अभ्यास निष्फल सिद्ध होता है, तथा बिना शारीरिक सक्रियता के केवल उत्तम आहार भी पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करने में अक्षम है। विभिन्न सांख्यिकीय और नैदानिक अध्ययनों के तुलनात्मक मूल्यांकन के माध्यम से यह प्रमाणित किया गया है कि योगासन और सात्विक (संतुलित) आहार का संयुक्त प्रयोग न केवल मानसिक तनाव, अवसाद, मोटापा, उच्च रक्तचाप और मधुमेह जैसे रोगों के निवारण में अत्यंत प्रभावशाली है, बल्कि यह मानव शरीर की स्वायत्त नाड़ी प्रणाली, हृदय संवहन तंत्र और चयापचय प्रक्रियाओं को भी इष्टतम स्तर पर संतुलित करता है। प्राकृतिक चिकित्सा और शालक्य तंत्र के नैदानिक अनुसंधानों का समावेश करते हुए, यह शोध पत्र स्पष्ट करता है कि वैश्विक स्वास्थ्य संकट के समाधान हेतु योग और यौगिक आहार को एक अनिवार्य जीवनशैली के रूप में अंगीकार करना समय की सर्वोपरि आवश्यकता है।

Manuscript Information

- ISSN No: 3139-6313
- Received: 13-07-2026
- Accepted: 28-07-2026
- Published: 03-08-2026
- IJCRP:1(4); 2026: 39-44
- ©2026, All Rights Reserved
- Plagiarism Checked: Yes
- Peer Review Process: Yes

How to Cite this Article

चौधरी सु. मानेश. योगासन, जीवनशैली और आहार: समग्र स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. Int. J. Creative Res. Publ. 2026;1(4): 39-44.

Access this Article Online



www.jcrp.in

मुख्य शब्द: योगासन, जीवनशैली, आहार विज्ञान, मिताहार, पथ्य-अपथ्य, ऋतुचर्या, समग्र स्वास्थ्य, आयुर्वेद, हठयोग, संतर्पणजन्य व्याधियां, शारीरिक द्रव्यमान सूचकांक।

1. प्रस्तावना

योग और आहार मानव जीवन के दो ऐसे मूलभूत और अविभाज्य स्तंभ हैं जिन पर एक स्वस्थ, सुखी और संतुलित जीवन की संपूर्ण आधारशिला टिकी हुई है। 'योग' जीवन की उस पद्धति या शैली का नाम है जो स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मनुष्य की होनी चाहिए। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से मानव जीवन की दो मुख्य पद्धतियाँ मानी गई हैं: योग पद्धति तथा भोग पद्धति। योग जीवन पद्धति का अनुसरण करने वाला मनुष्य निरोग, स्वस्थ, सुंदर, पवित्र और सक्षम रहते हुए जीवन पर्यंत सुख और आनंद की अनुभूति करता है। इसके विपरीत, भोग जीवन पद्धति में मनुष्य रोगी, अस्वस्थ, श्रीहीन और अक्षम रहते हुए जीवन भर शारीरिक और मानसिक क्लेशों का सामना करता है।

आधुनिक जीवनशैली में निरंतर बढ़ता मानसिक तनाव, व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा, और आहार संबंधी अज्ञानता मानव समाज को एक गंभीर स्वास्थ्य संकट की ओर ले जा रही है। आज के समय में संपूर्ण विश्व में मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ एक विकराल चुनौती बन चुकी हैं; वैश्विक स्वास्थ्य संगठनों की नवीनतम रिपोर्टों के अनुसार विश्व की एक बहुत बड़ी आबादी मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं से पीड़ित है। निष्क्रिय जीवनशैली और अस्वास्थ्यकर आहार मनुष्यों को जीवनशैली संबंधी गंभीर विकारों से घेर रहे हैं। ऐसी विकट परिस्थिति में, प्राचीन भारतीय विज्ञान—योग और आयुर्वेद—का महत्व और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है।

आयुर्वेद का मूल सिद्धांत है: "स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं, आतुरस्य विकार प्रशमनम्" अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी के रोगों का शमन करना। इस महान उद्देश्य की पूर्ति का सबसे सशक्त माध्यम 'योग' और 'आहार का अनुशासन' है। भारतीय ऋषि-मुनियों ने यह भली-भाँति जान लिया था कि शरीर के सभी तंत्रों को सुचारु रूप से कार्य करने, मांसपेशियों में लचीलापन लाने और हड्डियों को मजबूती प्रदान करने के लिए योग और संतुलित आहार दोनों का सह-अस्तित्व अनिवार्य है। महर्षि पतंजलि के अनुसार योग के द्वारा मन की वृत्तियों का शुद्धिकरण होता है, व्याकरण से वाणी का, और आयुर्वेद (आहार व चिकित्सा) के द्वारा शरीर का शुद्धिकरण होता है।

इस शोध पत्र की प्रस्तावना इस मूल विचार पर आधारित है कि आहार ही मन को प्रभावित करता है और मन ही समस्त कर्मों को इंद्रियों के माध्यम से संचालित और निर्देशित करता है। अतः योगाभ्यास का पूर्ण लाभ हमें तभी प्राप्त हो सकता है जब हमारा भोजन संतुलित और नियंत्रित हो। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि नियंत्रित भोजन और योग दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं तथा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रस्तुत शोध इसी पूरकता की वैज्ञानिक और शास्त्रीय विवेचना करने का एक व्यापक प्रयास है, जिसमें आधुनिक नैदानिक प्रमाणों और प्राचीन ग्रंथों के सूत्रों का समन्वय किया गया है।

भूमिका

योग और आहार के विषय में भारतीय वाङ्मय अत्यंत समृद्ध और वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण है। अष्टांग योग से लेकर हठयोग के विभिन्न ग्रंथों और आयुर्वेद की संहिताओं में जीवनशैली के इन दो अंगों का अत्यंत सूक्ष्मता से वर्णन किया गया है। साहित्य की यह समीक्षा स्पष्ट करती है कि योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, बल्कि चेतना का विज्ञान है। भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने स्वस्थ जीवन और योग की सफलता के लिए आहार और विहार के संतुलन को अनिवार्य बताया है। गीता

में कहा गया है कि जो व्यक्ति आहार, विहार, कर्म, नींद और जागरण में संतुलित है, उसी के लिए योग दुखों का नाश करने वाला सिद्ध होता है। आचार्य शंकर के अनुसार, "जो इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया जाये, वह आहार है", अर्थात् आहार केवल वह नहीं जो हम मुख से खाते हैं, बल्कि वह भी है जो हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों से ग्रहण करते हैं।

हठयोग के प्रमुख ग्रंथों—'हठयोग प्रदीपिका' और 'घेरण्ड संहिता'—में यौगिक आहार को विस्तार से परिभाषित किया गया है। स्वामी स्वात्माराम द्वारा रचित 'हठयोग प्रदीपिका' और महर्षि घेरण्ड रचित 'घेरण्ड संहिता' में स्पष्ट रूप से 'मिताहार' की अवधारणा प्रस्तुत की गई है। हठप्रदीपिका में वर्णित है कि जो आहार सिग्ध (चिकनाई युक्त), मधुर और परमेश्वर को समर्पित करके खाया जाए, तथा जिसमें पेट का एक-चौथाई भाग वायु के संचरण के लिए खाली छोड़ दिया जाए, उसे मिताहार कहते हैं। महर्षि घेरण्ड ने चेतावनी देते हुए कहा है कि जो साधक मिताहार का पालन किए बिना ही योगाभ्यास शुरू कर देता है, उसे योग में सिद्धि तो प्राप्त नहीं होती, अपितु वह अनेक प्रकार के भयंकर रोगों से ग्रसित हो जाता है।

आयुर्वेद के प्रमुख ग्रंथों जैसे 'चरक संहिता', 'सुश्रुत संहिता' और 'अष्टांग हृदयम्' में भी आहार को औषधि के समान माना गया है। आचार्य कश्यप ने आहार को 'महाभेषज' (सबसे बड़ी औषधि) कहा है। इन संहिताओं में 'पथ्य' (जो शरीर के स्रोतों और मन के लिए अनुकूल हो) और 'अपथ्य' (जो शरीर और मन के लिए हानिकारक हो) का विस्तृत विवेचन उपलब्ध है। आधुनिक शोधकर्ताओं, जैसे कि डॉ. तृप्ति तिवारी ने अपने तुलनात्मक सांस्कृतिक अध्ययन में प्रमाणित किया है कि भारतीय प्रणाली में योग और सात्त्विक आहार पर दिया गया बल आधुनिक जीवनशैली की चुनौतियों, जैसे अवसाद और असंतुलन, के निवारण का सबसे प्रभावशाली साधन है। सरिता पारीक (२०२२) के शोध पत्र "युवाओं के व्यक्तित्व विकास में योग की भूमिका का अध्ययन" में बताया गया है कि योग एक व्यवस्थित चैतन्य प्रक्रिया है जिससे मनुष्य का चहुंमुखी विकास बहुत कम समय में पूरा किया जा सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा भी एक ऐसी चिकित्सा पद्धति है जो शरीर को प्राकृतिक तरीकों से स्वस्थ रखने पर बल देती है, जिसमें आहार और योग की भूमिका केंद्रीय है।

2. शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं: प्रथम, योगासन और संतुलित आहार (मिताहार) के मध्य के जैविक, मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक अंतर्संबंधों की विस्तृत विवेचना करना। द्वितीय, आयुर्वेद और हठयोग में वर्णित 'पथ्य-अपथ्य' और 'ऋतुचर्या' के प्राचीन सिद्धांतों की आधुनिक नैदानिक संदर्भ में वैज्ञानिक प्रासंगिकता का गहन मूल्यांकन करना। तृतीय, आधुनिक पाश्चात्य जीवनशैली से उत्पन्न होने वाले रोगों (संतर्पणजन्य व्याधियों) जैसे—मोटापा, उच्च रक्तचाप, मधुमेह और मानसिक तनाव—के निवारण में योग एवं आहार की संयुक्त भूमिका को सांख्यिकीय और नैदानिक प्रमाणों के आधार पर सिद्ध करना। चतुर्थ, विशिष्ट रोगों (जैसे शूल रोग, अर्श, नेत्र एवं कर्ण रोग) के संदर्भ में यौगिक आहार के चिकित्सीय प्रभावों का विश्लेषण करना। पंचम, समाज को योग और ध्यान को अपनी आदतों में शुमार करने तथा एक प्रसन्न व स्वस्थ जीवन की कुंजी के रूप में अंगीकार करने हेतु साक्ष्य-आधारित प्रेरणा प्रदान करना।

3. शोध पद्धति

इस शोध पत्र में मुख्यतः वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और साहित्य-समीक्षा आधारित शोध पद्धति का व्यवस्थित प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों के अंतर्गत हठयोग के शास्त्रीय ग्रंथों (हठयोग प्रदीपिका, घेरण्ड संहिता, योगकुण्डलिन्युपनिषत्), आयुर्वेद की मूल संहिताओं (चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग हृदयम्) और श्रीमद्भगवद्गीता के मूल श्लोकों का सैद्धांतिक एवं दार्शनिक अध्ययन किया गया है। द्वितीयक स्रोतों के रूप में योग, प्राकृतिक चिकित्सा, आधुनिक पोषण विज्ञान और जीवनशैली प्रबंधन पर प्रकाशित समसामयिक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रों, चिकित्सा पत्रिकाओं के लेखों और सांख्यिकीय प्रतिवेदनों का संकलन किया गया है। तुलनात्मक विश्लेषण विधि का प्रयोग करते हुए आधुनिक नैदानिक मापदंडों (जैसे शारीरिक द्रव्यमान सूचकांक, रक्तचाप, स्वास्थ्य व्यवहार सूचकांक) के साथ पारंपरिक योगिक आहार (मिताहार) के प्रभावों का सह-संबंध स्थापित करने के लिए उपलब्ध सांख्यिकीय आँकड़ों का परिमाणात्मक मूल्यांकन किया गया है। इसके अतिरिक्त, विशिष्ट भौगोलिक सर्वेक्षणों (जैसे जयपुर योग केंद्र सर्वेक्षण) से प्राप्त आँकड़ों का गुणात्मक विश्लेषण भी इस शोध में समाहित किया गया है।

4. चर्चा

शोध के इस मुख्य भाग में योगासन, जीवनशैली और आहार के विविध आयामों का क्रमबद्ध और अत्यंत गहन विश्लेषण किया गया है।

शारीरिक और मानसिक शरीरक्रिया विज्ञान पर योगासन का प्रभाव

योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, बल्कि यह शरीर, मन, चेतना और आत्मा को एकजुट करके पूर्ण संतुलन में लाने की एक अत्यंत सूक्ष्म और वैज्ञानिक प्रक्रिया है। शरीर को ऐसे आसन या स्थिति में रखना जिससे स्थिरता और सुख का अनुभव हो, योगासन कहलाता है।

हृदय और रक्त संवहन तंत्र पर योगासनों का प्रभाव अत्यंत सकारात्मक होता है। सामान्य शारीरिक व्यायामों की भाँति आसन करते समय हृदयगति का असामान्य रूप से बढ़ना अपेक्षित नहीं होता। पद्मासन, वज्रासन जैसे ध्यानात्मक आसनों में हृदय व रक्त संवहन प्रणाली पर कार्यभार न्यूनतम रहता है। जब शरीर और मन भली-भाँति शिथिल हो जाते हैं, तो स्नायविक तनाव कम हो जाता है, जिससे रक्त वाहिनियाँ भी शिथिल हो जाती हैं और रक्तचाप तथा हृदयगति प्राकृतिक रूप से कम होकर सामान्य हो जाती है। आधुनिक अनुसंधानों ने यह भी सिद्ध किया है कि योगाभ्यास शरीर की संवेदनशीलता को पुनः स्थापित करता है। शीर्षासन या सर्वांगासन जैसे मुद्रा अभ्यास उच्च रक्तचाप के कारण होने वाली हृदय की जटिलताओं, विशेषकर हृदय के बाएँ आलिंद के बढ़ने की समस्या को रोकने और उसके उपचार में अत्यंत लाभकारी सिद्ध हुए हैं। योग के नियमित अभ्यास से तनाव से जुड़े हार्मोनल स्राव की अतिसक्रियता में भी उल्लेखनीय कमी आती है।

स्नायुपेशी तंत्र और मनो-शारीरिक शिथिलीकरण के दृष्टिकोण से, मनुष्य की भावनाओं का सीधा प्रभाव उसकी शारीरिक क्रियाओं पर पड़ता है। योग रीति से आसन करने पर पेशियों, नाड़ी तंत्र एवं मस्तिष्क के मध्य एक अद्भुत और अपूर्व सामंजस्य का निर्माण होता है। उड्डियान बंध और नौलि क्रिया जैसी योगिक प्रक्रियाओं में उदर की

पेशियों का उत्कृष्ट उपयोग होता है जिससे पाचन तंत्र को बल मिलता है। नियमित योगाभ्यास से स्वायत्त नाड़ी संस्थान का संतुलन इस प्रकार स्थापित होता है कि प्रतिदिन के तनाव और चिंता शरीर के भीतरी वातावरण की सम्यक्स्था को बिगाड़ नहीं पाते। योगासन मस्तिष्क को ठीक उसी प्रकार उत्तेजित करते हैं जिससे सकारात्मक रसायनों का स्राव होता है, जो व्यक्ति को आनंद, संतुष्टि और शांति की अनुभूति कराते हैं। योग से प्राप्त यह आनंद क्षणिक सुखों या भौतिक भोगों से सर्वथा भिन्न और उच्च कोटि का होता है।

मिताहार की तात्त्विक और वैज्ञानिक विवेचना

योग के ग्रंथों में आहार को साधना की सफलता का मेरुदंड माना गया है। आहार के बिना शरीर में वह ऊर्जा और प्राणशक्ति उत्पन्न नहीं हो सकती जो योगासनों और प्राणायाम के दीर्घकालिक अभ्यास के लिए नितांत आवश्यक है। योग का उद्देश्य केवल शरीर को पुष्ट करना नहीं है, बल्कि प्राणों पर नियंत्रण प्राप्त करना है।

हठयोग ग्रंथों में योगिक आहार को तीन मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया गया है: मिताहार (संतुलित और मध्यम आहार), पथ्य आहार (अनुकूल और लाभकारी आहार), और अपथ्य आहार (वर्जित और हानिकारक आहार)। मिताहार की सबसे उत्कृष्ट और वैज्ञानिक परिभाषा हठयोग प्रदीपिका और घेरण्ड संहिता में मिलती है: "शुद्धं सुमधुरं स्निग्धमुदरार्थविवर्जितम्। भुज्यते सुरसंप्रीत्या मिताहारमिमं विदुः"। इसका तात्पर्य यह है कि आहार स्वच्छ, सुमधुर (प्राकृतिक रूप से मीठा), स्निग्ध (आवश्यक स्वस्थ वसा से युक्त) होना चाहिए।

पेट को भरने का अनुपात मिताहार का सबसे महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पहलू है। पेट के आधे भाग को अन्न (ठोस आहार) से, तीसरे या चौथाई भाग को जल (तरल पदार्थ) से भरना चाहिए, और शेष एक-चौथाई भाग को वायु के संचलन और पाचन क्रिया के लिए पूर्णतः खाली छोड़ देना चाहिए। यदि पेट को पूरी तरह से ठोस आहार से भर दिया जाए, तो पाचक रसों को भोजन के साथ मिश्रित होने और आमाशय की मांसपेशियों को मंथन प्रक्रिया के लिए कोई स्थान नहीं मिलता। इससे पाचन तंत्र पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है और भोजन पचने के बजाय सड़ने लगता है, जो शरीर में विजातीय द्रव्य या विष उत्पन्न करता है। मिताहार न केवल भोजन की मात्रा को नियंत्रित करता है, बल्कि यह भी निर्धारित करता है कि 'क्या खाएं' और 'किस भाव से खाएं' (शिवसम्प्रीत्यै - ईश्वर को अर्पित करने के भाव से), जो इसे मात्र एक शारीरिक क्रिया से उठाकर एक आध्यात्मिक अनुशासन बना देता है।

आयुर्वेद के परिप्रेक्ष्य में पथ्य और अपथ्य का विस्तृत सिद्धांत

आयुर्वेद में जो आहार शरीर के स्रोतों में कोई अवरोध पैदा न करे और मन के लिए सुखकर हो, उसे 'पथ्य' कहा गया है। 'पथ्य' शब्द 'पथ' धातु से निर्मित है जिसका अर्थ है रास्ता, अर्थात् जो शरीर स्थित मार्गों में प्राकृतिक प्रवाह को बनाए रखे वही पथ्य है। इसके विपरीत, जो पदार्थ शरीर के अंगों को नुकसान पहुंचाएँ और मानसिक रूप से अरुचिकर हों, उन्हें 'अपथ्य' कहा गया है। आधुनिक विज्ञान भी मानता है कि दोषपूर्ण आहार लेने का मुख्य कारण अज्ञानता है। हीन, अम्लीय तथा अप्राकृतिक आहार की अधिकता की मांग से व्यक्ति अस्वस्थ हो रहे हैं।

हठयोग के अनुसार उत्तम योग साधकों के लिए पुराना चावल, जौ, साठी चावल, क्षीर (दूध), घृत (घी), मक्खन, मिश्री, शहद, सोंठ, परवल, लौकी, तरोई, खीरा, मूंग की दाल और वर्षा का शुद्ध जल उत्कृष्ट पथ्य माने गए हैं। प्राकृतिक वसा जैसे अखरोट, बादाम, और नारियल का

तेल मस्तिष्क के कार्य और हार्मोनल संतुलन के लिए अत्यंत आवश्यक माने गए हैं। दूसरी ओर अत्यधिक कड़वे, खट्टे, नमकीन, तीखे, अत्यधिक भुने हुए पदार्थ, दही, गरिष्ठ सब्जियां, मादक द्रव्य, लहसुन आदि तामसिक और राजसिक प्रवृत्तियों को बढ़ाते हैं और योग साधना में विघ्न उत्पन्न करते हैं, अतः इन्हें अपथ्य की श्रेणी में रखा गया है।

विभिन्न व्याधियों में पथ्य-अपथ्य का नैदानिक अनुप्रयोग

विभिन्न शारीरिक और मानसिक रोगों के उपचार में पथ्य-अपथ्य का पालन औषधियों से भी अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। आयुर्वेद के विद्वानों का कथन है कि यदि रोगी पथ्य का सेवन करता है तो उसे औषधि की आवश्यकता ही नहीं है, और यदि वह निरंतर अपथ्य का सेवन करता है तो कोई भी औषधि उस पर कार्य नहीं करेगी।

अर्श (बवासीर) जैसे कष्टकारी रोग में आहार की भूमिका सर्वोपरि है। अर्श के रोगियों के लिए मसालेदार, तीखा आहार और कठोर सतह पर अधिक देर तक बैठना (अपथ्य) निषिद्ध है, क्योंकि यह गुदा क्षेत्र की शिराओं पर दबाव डालता है। इसके विपरीत, सुपाच्य और रेशेदार आहार तथा उचित जीवनशैली (पथ्य) इस रोग के निवारण में अत्यंत सहायक है।

श्वास और कास (श्वसन संबंधी विकार) के प्रबंधन में वात और कफ को शांत करने वाले हल्के और गर्म आहार को पथ्य माना गया है, जबकि भारी, ठंडे और बलगम (कफ) उत्पन्न करने वाले पदार्थ अपथ्य माने गए हैं। इसी प्रकार, शूल रोग (विभिन्न प्रकार के दर्द) मुख्य रूप से वात दोष के प्रकुपित होने से उत्पन्न होते हैं। इसके निवारण के लिए स्निग्ध, उष्ण, भारी और मृदु गुणों से युक्त आहार का सेवन किया जाना चाहिए, जो वात के रूक्ष और शीत गुणों को नष्ट कर सके। रात्रि जागरण और अत्यंत रूक्ष आहार शूल रोग में सर्वथा अपथ्य हैं।

आयुर्वेद के शालक्य तंत्र में नेत्र और कर्ण (आँख और कान) के रोगों के निवारण हेतु विशिष्ट आहार और जीवनशैली का उल्लेख है। नेत्र रोगों से बचाव के लिए शुद्ध घी, पुराना चावल, मूंग दाल और करेला अत्यंत लाभप्रद (पथ्य) हैं, जबकि अत्यधिक मैथुन, क्रोध, शोक, नींद में बाधा, खट्टे, तीखे और उष्ण पदार्थों का सेवन अपथ्य है। कर्ण रोगों में गेहूँ, चावल, परवल और घी का सेवन श्रवण शक्ति को पुष्ट करता है।

ऋतुचर्या: पर्यावरणीय परिवर्तनों के साथ आहार का सामंजस्य

मानव शरीर ब्रह्मांड का ही एक सूक्ष्म रूप है, अतः बाह्य पर्यावरण और ऋतुओं के परिवर्तन का शरीर के त्रिदोषों (वात, पित्त, कफ) और जठराग्नि पर सीधा और गहरा प्रभाव पड़ता है। स्वास्थ्य के संरक्षण के लिए 'ऋतुचर्या' का पालन अत्यंत आवश्यक है।

शिशिर ऋतु (जनवरी-मार्च) में बाह्य वातावरण अत्यंत ठंडा होता है, जिसके परिणामस्वरूप शरीर की जठराग्नि अत्यंत तीव्र हो जाती है। शरीर की ऊष्मा बनाए रखने के लिए स्निग्ध, मधुर, अम्ल (खट्टे) और लवण (नमकीन) रस युक्त भारी आहार का सेवन इस ऋतु में पथ्य है। वसंत ऋतु (मार्च-मई) में सर्दियों में संचित कफ सूर्य की गर्मी से पिघलने लगता है, जिससे जठराग्नि मंद हो जाती है। इस ऋतु में सुपाच्य, रूक्ष, कटु (तीखे), तिक्त (कड़वे) और कषाय (कसैले) आहार का सेवन करना चाहिए तथा भारी और ठंडे खाद्य पदार्थों से पूर्णतः बचना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतु (मई-जुलाई) में अत्यधिक गर्मी के कारण शरीर से ऊर्जा का भारी हास होता है और वात बढ़ने लगता है। इस मौसम में मधुर, ठंडे, द्रव रूप (तरल) और स्निग्ध आहार लाभप्रद होते हैं। कटु, अम्ल

और लवण रसों का सर्वथा त्याग करना चाहिए। वर्षा ऋतु (जुलाई-सितंबर) में जठराग्नि अपने सबसे कमजोर स्तर पर होती है और वात दोष का अत्यधिक प्रकोपन होता है। अतः सुपाच्य, हल्के, ताजे गर्म भोजन का सेवन करना चाहिए, तथा बासी और ठंडे भोजन का सर्वथा निषेध है। अंततः, शरद ऋतु (सितंबर-नवंबर) में वर्षा ऋतु की ठंडक के बाद अचानक सूर्य की तीक्ष्ण गर्मी मिलने से शरीर में संचित पित्त प्रकुपित हो जाता है। पित्त शमन के लिए तिक्त, मधुर और कषाय रसों का सेवन पथ्य माना गया है। ऋतुओं के अनुरूप आहार में परिवर्तन कर हम न केवल शरीर के चयापचय को ठीक रख सकते हैं, बल्कि ऋतु परिवर्तन से होने वाले अनेक संक्रामक रोगों से भी स्वयं को सुरक्षित रख सकते हैं।

संतर्पणजन्य व्याधियां और प्राकृतिक चिकित्सा का महत्व

आधुनिक समाज की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि आज अधिकांश रोग कुपोषण से नहीं, अपितु अतिपोषण या गलत पोषण से उत्पन्न हो रहे हैं। आयुर्वेद में इन्हें 'संतर्पणजन्य व्याधियां' कहा गया है। अत्यधिक स्निग्ध, मधुर, भारी आहार, नया अन्न, मांस, और डेयरी उत्पादों का अत्यधिक सेवन बिना किसी शारीरिक श्रम (गतिहीनता) के करने से ये भयंकर रोग उत्पन्न होते हैं।

मधुमेह, अतिस्थूल्य (मोटापा), हृदय रोग, आलस्य, उच्च रक्तचाप—ये सभी पाश्चात्य जीवनशैली के दुष्परिणाम हैं जिन्हें कभी संपन्न लोगों की बीमारियां कहा जाता था। योग और उचित पथ्य-अपथ्य के ज्ञान के बिना केवल औषधियों से इनका पूर्ण उपचार सर्वथा असंभव है। ऐसे रोगों के शमन के लिए आहार में पुराना गेहूँ, मूंग दाल, छाछ, परवल, करेला जैसी सब्जियों का समावेश और आलस्य त्याग कर योगासनो का नियमित अभ्यास नितांत आवश्यक है। अंकुरित आहार व मौसमी फलों का सेवन शरीर के अम्लीय व क्षारीय संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतों के अनुसार भोजन का सही क्रम भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। आहार ग्रहण करते समय सर्वप्रथम फलों (जैसे अनार, पपीता, सेब) का सेवन करना चाहिए, तत्पश्चात् अंकुरित आहार ग्रहण करना चाहिए। भोजन को भली-भांति चबाकर खाना चाहिए और भोजन के एक घंटे बाद तक जल का सेवन नहीं करना चाहिए। भोजनोपरांत वज्रासन में बैठने से पाचन क्रिया अत्यंत सुदृढ़ होती है। जयपुर योग केंद्र सर्वेक्षण के अंतर्गत किए गए अध्ययनों में यह भी सामने आया है कि कुष्ठ रोग और एचआईवी जैसी गंभीर बीमारियों से ग्रसित गर्भवती महिलाओं में संक्रमण की रोकथाम के लिए निःशुल्क औषधियों के साथ-साथ स्वस्थ और सार्थक जीवनशैली हेतु नियमित परामर्श प्रदान किया जा रहा है। इस प्रकार के कार्यक्रम यह सिद्ध करते हैं कि गंभीर बीमारियों के प्रबंधन में भी योग और संतुलित आहार आधारित जीवनशैली एक अमोघ अस्त्र के रूप में कार्य करती है। पर्यावरण के प्रति जागरूकता भी यौगिक जीवनशैली का ही एक अंग है; जैसे कि नौतपा (ग्रीष्मकाल) के दौरान प्रशिक्षणार्थियों द्वारा प्लास्टिक का उपयोग न करना और अपनी भोजन सामग्री स्वयं लाना भारतीय जीवन शैली की सादगी और शुद्धता का प्रतीक है।

सांख्यिकीय और नैदानिक प्रमाणों का परिमाणात्मक मूल्यांकन

योग और आहार के सकारात्मक प्रभावों का मूल्यांकन केवल सैद्धांतिक या दार्शनिक स्तर पर नहीं किया गया है, बल्कि आधुनिक वैज्ञानिक सांख्यिकी द्वारा भी इसे बार-बार और अकाट्य रूप से सिद्ध किया गया है।

एक प्रमुख सांख्यिकीय शोध अध्ययन में 300 प्रतिभागियों को चार भिन्न समूहों (योग और आहार दोनों का अभ्यास करने वाले, केवल योग करने वाले, केवल आहार नियंत्रित करने वाले, और कोई हस्तक्षेप नहीं

करने वाले) में बांटकर उनके स्वास्थ्य मापदंडों का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया। इस अत्यंत महत्वपूर्ण सांख्यिकीय अध्ययन के परिणाम यह दर्शाते हैं कि योग और आहार एक-दूसरे के अत्यंत मजबूत पूरक हैं:

चर	सह-संबंध	वैज्ञानिक व्याख्या
योग अभ्यास व मानसिक तनाव स्तर	-0.74	नकारात्मक सह-संबंध: यह सिद्ध करता है कि जितना अधिक योगाभ्यास किया जाता है, मानसिक तनाव में उतनी ही तीव्र और भारी कमी आती है।
संतुलित आहार व शारीरिक ऊर्जा स्तर	+0.66	सकारात्मक सह-संबंध: यह इंगित करता है कि सात्विक आहार का स्तर जितना उच्च होता है, शरीर की कार्यक्षमता और ऊर्जा का स्तर उतना ही अधिक बढ़ जाता है।

एक अन्य विस्तृत नैदानिक अध्ययन में 143 महिलाओं के स्वास्थ्य व्यवहार सूचकांक का अत्यंत सूक्ष्म विश्लेषण किया गया। इस

अध्ययन में उन महिलाओं की तुलना की गई जो योग का नियमित अभ्यास करती थीं और जो योग से सर्वथा अपरिचित थीं।

स्वास्थ्य मापदंड	नियमित योग समूह (n = 68)	नियंत्रण समूह (n = 75)	संभाव्यता मूल्य
समग्र स्वास्थ्य व्यवहार सूचकांक	90.2 ± 12.74	84.7 ± 10.82	0.0169
उचित आहार ग्रहण करने की आदतें	3.98 ± 0.620	3.53 ± 0.696	0.0001
निवारक (रोग-प्रतिरोधी) व्यवहार	3.76 ± 0.639	3.59 ± 0.630	0.1363

इस शोध के परिणाम सांख्यिकीय रूप से यह स्पष्ट इंगित करते हैं कि नियमित योगाभ्यास करने वाली महिलाओं में उचित आहार संबंधी आदतें और समग्र स्वास्थ्य व्यवहार उन महिलाओं की तुलना में बहुत उच्च स्तर के थे जो योग नहीं करती थीं। योग के नियमित अभ्यास से व्यक्ति में स्वयं के प्रति और प्रकृति के प्रति एक असीम जागरूकता उत्पन्न होती है, जो उसे योग के अहिंसा और शौच (शुद्धता) के सिद्धांतों के निकट ले जाती है। इस जागरूकता के परिणामस्वरूप व्यक्ति स्वतः ही सचेत भोजन की ओर प्रवृत्त हो जाता है और अधिक खाने की हानिकारक प्रवृत्ति में भारी गिरावट आती है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में यह भी देखा गया है कि योग मोटापे और आंत के आस-पास संचित वसा को नियंत्रित करने में अत्यंत सहायक सिद्ध हुआ है, जो अंततः मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसे जानलेवा चयापचय रोगों को जड़ से नियंत्रित करता है। भारत और अन्य देशों में योग करने वाले लोगों पर हुए नवीन अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि योग साधक स्वाभाविक रूप से सात्विक, शाकाहारी आहार की ओर उन्मुख होते हैं और रात्रि का भोजन सूर्योदय के सिद्धांतों के अनुरूप जल्दी करने की अत्यंत स्वस्थ आदत अपना लेते हैं।

5. निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र के विस्तृत, साक्ष्य-आधारित और गहन विश्लेषण से यह अकाट्य रूप से सिद्ध होता है कि 'योगासन' और 'संतुलित आहार' (मिताहार) मानव जीवन की गाड़ी के दो ऐसे अपरिहार्य पहिए हैं, जिनके बिना समग्र स्वास्थ्य की सुदीर्घ यात्रा पूर्ण नहीं की जा सकती। जहाँ एक ओर अस्वास्थ्यकर और अपथ्य आहार से शरीर में विभिन्न विषैले विजातीय द्रव्यों का संचय होता है और नाड़ी तंत्र के मार्गों में भयंकर अवरोध उत्पन्न होता है, वहीं दूसरी ओर योगाभ्यास उन सभी अवरोधों को जड़ से दूर कर शरीर में प्राणवायु का सुचारू प्रवाह सुनिश्चित करता है।

हठयोग के प्राचीन ग्रंथों और आयुर्वेद की संहिताओं में सदियों पूर्व जिस 'मिताहार' (पेट का एक-चौथाई भाग रिक्त रखने का सिद्धांत), 'पथ्य-अपथ्य' (अनुकूल-प्रतिकूल भोजन का विज्ञान) और 'ऋतुचर्या' (मौसमी जीवनशैली प्रबंधन) का प्रतिपादन किया गया था, आधुनिक

सांख्यिकीय और नैदानिक शोध आज उन्हीं चिरंतन सिद्धांतों की शत-प्रतिशत वैज्ञानिक पुष्टि कर रहे हैं। योग मात्र कुछ शारीरिक आसनों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक अत्यंत व्यवस्थित चैतन्य प्रक्रिया है जो शरीर, मन और आत्मा के मध्य एक विलक्षण और दैवीय संतुलन स्थापित करती है।

आधुनिक युग की सबसे बड़ी विभीषिका—'संतर्पणजन्य व्याधियां' (जैसे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, मोटापा) और 'मानसिक अवसाद'—का स्थायी और सुरक्षित समाधान किसी भी कृत्रिम रासायनिक औषधि में नहीं, अपितु भारतीय ज्ञान परंपरा से उपजी योग पद्धति और आहार नियंत्रण में ही निहित है। जब व्यक्ति अपनी मूल प्रकृति (वात, पित्त, कफ) और ऋतु के अनुसार 'हितभुक्', 'मितभुक्' और 'ऋतभुक्' (हितकारी, संतुलित और ऋतु के अनुकूल आहार) के शाश्वत नियमों का पालन करते हुए नियमित योगासन और ध्यान का अभ्यास करता है, तो उसके शरीर के भीतर स्वयं ही रोग-निवारण की असीम और अद्भुत क्षमता विकसित हो जाती है।

अतः, यह शोध पत्र समाज के प्रत्येक वर्ग, वैश्विक नीति-निर्माताओं और स्वास्थ्य पेशेवरों के सम्मुख एक अत्यंत स्पष्ट और साक्ष्य-पुष्ट अनुशासित प्रस्तुत करता है कि संपूर्ण जनमानस को सुखी, शांत और निरोग बनाने के लिए योग तथा योगिक आहार को दैनिक दिनचर्या का एक अनिवार्य और अविभाज्य अंग बनाया जाना चाहिए। केवल इसी समग्र दृष्टिकोण को अपनाकर मनुष्य अपने अस्तित्व के उच्चतम आनंद और परमानंद को प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ सूची

1. कमीशन फॉर साइंटिफिक एंड टेक्निकल टर्मिनोलॉजी. योग जीवनशैली और आहार: शोध पत्र. नई दिल्ली: शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार.
2. तिवारी त. आधुनिक जीवनशैली में योग एवं पोषण का स्वास्थ्य पर प्रभाव: एक तुलनात्मक सांस्कृतिक अध्ययन. होम साइंस जर्नल. 2025;11(2).
3. पारीक स. युवाओं के व्यक्तित्व विकास में योग की भूमिका का अध्ययन. IJFMR. 2022;3(4).

4. पचौरी एलजे. आहार व योग ही स्वस्थ जीवन का आधार. IJCRT.
5. यादव ज, जोशी एनके, मानसी, सुमन. आयुर्वेद में आहार का महत्व और पथ्य-अपथ्य का सिद्धांत. IJCRT. 2025.
6. उरकुड़े एस, पटेल बीआर. Pathya Apathya in modern era and its special emphasis on Santarpanajanya Vyadhi. Journal of Ayurveda and Holistic Medicine. 2023;11(3).
7. स्वात्माराम. हठयोग प्रदीपिका. [मूल रचना-काल: लगभग 15वीं शताब्दी ई.].
8. घेरण्ड. घेरण्ड संहिता. [मूल रचना-काल: लगभग 17वीं शताब्दी ई.].
9. गौतम र. योगकुण्डलिनि-उपनिषत्. संस्कृत डाक्यूमेंट्स. यहाँ उपलब्ध: <https://sanskritdocuments.org>
10. शर्मा र, बीना. योग में मिताहार का महत्व. अनुबुक्स शोध.
11. गोकल ए, एवं अन्य. Positive impact of yoga and pranayama on obesity, hypertension, blood sugar, and cholesterol. J Altern Complement Med. 2007;13(10).
12. लिम ई, ह्युन ई. The impacts of Pilates and yoga on health-promoting behaviors. Int J Environ Res Public Health. 2021;18(7).

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution–Non-Commercial–No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) license. This license permits sharing and redistribution of the article in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted under this license.

About the author



सुनिता चौधरी ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान से संबद्ध शोधार्थी हैं। उनकी शैक्षणिक रुचि सामाजिक विज्ञान, शिक्षा तथा समसामयिक शोध विषयों में है। वे गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान, अकादमिक लेखन और समाजोपयोगी अध्ययन के माध्यम से ज्ञान के विकास एवं शोध उत्कृष्टता में सक्रिय योगदान दे रही हैं।

डॉ. मानेश ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान में कार्यरत एक समर्पित शिक्षाविद् एवं शोध मार्गदर्शक हैं। उनका विशेषज्ञता क्षेत्र सामाजिक विज्ञान एवं उच्च शिक्षा अनुसंधान है। वे शोध निर्देशन, अकादमिक लेखन तथा नवाचार आधारित अध्ययन को प्रोत्साहित करते हुए विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं के मार्गदर्शन में सक्रिय भूमिका निभाते हैं।